नईदुनिया

संपादकीय

देवभूमि की पवित्रता पर चोट बर्दाश्त नहीं

उत्तराखंड को यूं ही देवभूमि नहीं कहा जाता। यहां का कण-कण आस्था से जुड़ा है। बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री और यमुनोत्री जैसे धाम केवल मंदिर नहीं हैं, बल्कि करोड़ों लोगों की आस्था का आधार हैं। यहां की हवा में मंत्र है, यहां के पानी में मोक्ष है और यहां की जमीन पर भगवान के चरणों की धूल है। ऐसे में जब इस पवित्र भूमि पर ऐसे आयोजन होने लगें, जो उसकी मर्यादा के खिलाफ हों, तो चिंता होना स्वाभाविक है। हाल में बद्रीनाथ में एक संगीत कार्यक्रम को लेकर विवाद खड़ा हुआ है। कहा गया कि पवित्र स्थल पर इस तरह के शोर-शराबे वाले कार्यक्रम नहीं होने चाहिए। यह मांग सिर्फ किसी एक नेता या दल की नहीं है, बल्कि हर उस व्यक्ति की मांग है, जो संस्कृति को मानता है और धर्म को धरोहर समझता है। देवभूमि में शांतिपूर्ण तरीके से भगवान का भजन होना चाहिए, न कि ऐसा संगीत, जो वहां की आध्यात्मिक ऊर्जा को भंग कर दे। पवित्रता केवल पत्थर की नहीं, भाव की भी है।

कई लोग कहते हैं कि संगीत तो भक्ति का ही रूप है, लेकिन सवाल संगीत का नहीं, बल्कि उसकी प्रकृति का है। बद्रीनाथ धाम कोई मनोरंजन स्थल नहीं है। वहां हजारों लोग बड़ी कठिन यात्रा करके मोक्ष की कामना लेकर आते हैं। वहां लाउडस्पीकर पर फिल्मी धुन बजाना या नाच-गाना करना आस्था की भावना को ठेस पहुंचा सकता है। अगर आज बद्रीनाथ में इसकी अनुमति दी गई तो कल केदारनाथ में भी यही होगा और फिर धीरे-धीरे हमारे धाम पर्यटन स्थल बनकर रह जाएंगे।

देवभूमि की पवित्रता केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि पर्यावरणीय भी है। हिमालय बहुत संवेदनशील है। यहां जोर से बजने वाले साउंड सिस्टम से न केवल ध्वनि प्रदूषण फैलता है, बल्कि वन्य जीवन पर भी असर पड़ता है। पहले ही चार धाम यात्रा में क्षमता से ज्यादा भीड़ आ रही है, कचरा बढ़ रहा है और अब अगर इस तरह के आयोजन भी शुरू हो गए तो हिमालय की गोद और ज्यादा प्रदूषित होगी। उत्तराखंड सरकार से ऐसे कार्यक्रमों पर रोक लगाने की मांग की जा रही है और यह मांग जायज है। सरकार को चाहिए कि वह देवभूमि की पवित्रता बनाए रखने के लिए एक स्पष्ट नीति बनाए। मंदिर परिसर और उसके आसपास के एक किलोमीटर के दायरे में किसी भी प्रकार के मनोरंजन वाले संगीत कार्यक्रम की अनुमति न दी जाए। केवल भजन-कीर्तन और शास्त्रीय संगीत को ही अनुमति मिले। आयोजन की अनुमति देने से पहले स्थानीय पुजारियों और धर्माचार्यों से राय लेना अनिवार्य किया जाए। चार धाम यात्रा मार्ग पर ध्वनि सीमा तय की जाए और उसका सख्ती से पालन कराया जाए। संस्कृति को बचाने के लिए हमें यह समझना होगा कि संस्कृति हमारी धरोहर है। हम इसे नाच-गाकर नहीं, बल्कि मौन और साधना से बचा सकते हैं। देवभूमि में शंख बजना भी एक अनुशासन में होना चाहिए, शोर नहीं होना चाहिए। अगर हम आज इस पवित्रता को नहीं बचाएंगे तो कल हमारी आने वाली पीढ़ी पूछेगी कि आपने देवभूमि को बाजार क्यों बनने दिया। सरकार को यह भी तय करना होगा कि वह भक्त चाहती है या पर्यटक। भक्त आता है दर्शन करने, पर्यटक आता है मौज-मस्ती करने। अगर हम पर्यटक को लुभाने के लिए धामों में डिस्को जैसे आयोजन करेंगे तो भक्त वहां से दूर हो जाएगा। इसलिए जरूरी है कि धाम को धाम ही रहने दिया जाए, उसे इवेंट प्लेस न बनाया जाए।

देवभूमि की पवित्रता बचाने के लिए कड़े कदम उठाने का समय आ गया है। यह काम केवल सरकार का नहीं, बल्कि हम सबका है। हर यात्री को भी यह प्रण लेना होगा कि वह वहां जाकर शोर नहीं करेगा, कचरा नहीं फैलाएगा और आस्था का सम्मान करेगा। तभी देवभूमि बची रहेगी और तभी भगवान भी प्रसन्न रहेंगे।

आजकल

सांसदों के सुझाव फाइलों में और यात्री प्लेटफॉर्म पर, ग्यारह माह बाद भी बैठक बेनतीजा

भोपाल रेल मंडल के सांसदों की बैठक को ग्यारह माह से अधिक समय बीत चुका है, लेकिन बैठक में दिए गए एक दर्जन से ज्यादा सुझावों पर अब तक अमल नहीं हुआ है। यह स्थिति रेल प्रशासन की कार्यशैली पर गंभीर सवाल खड़ा करती है। सांसद जनता के प्रतिनिधि होते हैं और उनकी बैठक केवल औपचारिकता नहीं होनी चाहिए। बैठक में दिए गए सुझावों पर समयबद्ध कार्रवाई होनी चाहिए, लेकिन भोपाल में स्थिति इसके उलट है। भोपाल स्टेशन पर यात्री कष्ट पर कष्ट झेलते हैं। ट्रेनों के समय पर नहीं आने से यात्रियों की परेशानी बढ़ती रहती है। कई यात्रियों को अपनी यात्रा का कार्यक्रम बदलना पड़ता है, जबकि कुछ लोग ट्रेन की अधिक देरी को देखते हुए वैकल्पिक व्यवस्था करने को मजबूर होते हैं। यह स्थिति यात्री सुविधा के दावों पर सवाल खड़े करती है। भोपाल एक्सप्रेस का मथुरा में ठहराव और रानी कमलापति से पुणे ट्रेन नियमित करने के प्रस्ताव अब भी अधूरे हैं। बैठक में नई ट्रेन शुरू करने, ट्रेनों के ठहराव बढ़ाने, लंबित रेल परियोजनाओं को गति देने और यात्री सुविधाएं बढ़ाने से जुड़े सुझाव दिए गए थे।

इटारसी स्टेशन पर नागपुर-इंदौर त्रिशताब्दी एक्सप्रेस के ठहराव तथा जोधपुर और चेन्नई-देहरादून ट्रेनों का इटारसी तक विस्तार करने के सुझाव भी दिए गए थे। इन पर भी अपेक्षित कार्रवाई नहीं हुई है। राज्यरानी एक्सप्रेस को भोपाल के बजाय रानी कमलापति से चलाने तथा सिरोंज-लटेरी-कुरवाई-समसाबाद और रामगंज मंडी-भोपाल नई रेल लाइनों को जल्द शुरू करने के प्रस्ताव भी लंबित हैं। सांसद बैठक में सुझाव देते हैं, अधिकारी सहमति जताते हैं, लेकिन बाद में फाइल ठंडे बस्ते में चली जाती है। रेलवे को हर तीन माह में सांसदों के सुझावों की समीक्षा करनी चाहिए और लंबित मामलों का कारण बताना चाहिए। सांसदों के सुझाव केवल राजनीतिक मांग नहीं, बल्कि जनता की आवाज हैं। अब समय आ गया है कि फाइलों से निकलकर इन सुझावों को पटरी पर उतारा जाए।

राज्यसभा का गणित और आत्मविश्वास : चुनाव नहीं, शक्ति प्रदर्शन

उत्तर प्रदेश की दस राज्यसभा सीटों पर होने वाला चुनाव सिर्फ एक संवैधानिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह आने वाले विधानसभा चुनाव से पहले शक्ति प्रदर्शन का बड़ा मंच है। जो दल राज्यसभा में ज्यादा सीटें जीतेगा, वही लखनऊ की लड़ाई में मनोवैज्ञानिक बढ़त ले लेगा। भाजपा इस समय क्लीन स्वीप के मूड में दिख रही है और इसका कारण सिर्फ संख्या नहीं, बल्कि उसकी रणनीति भी है।

संख्या का खेल तो बहाना है, असली खेल मन का है। विधानसभा में एनडीए के पास करीब 289 वोट हैं और एक सीट जीतने के लिए 37 वोट चाहिए। इस हिसाब से सात सीटों का गणित भाजपा के पक्ष में है, लेकिन राजनीति गणित से नहीं, मन से चलती है। सात सीट जीतना भाजपा के लिए संतोष नहीं है। उसे आठवीं सीट चाहिए, क्योंकि आठ सीट का मतलब विपक्ष का पूरी तरह सफाया और बसपा का राज्यसभा से बाहर होना है।

बसपा के लिए यह अस्तित्व की लड़ाई है। मायावती की पार्टी के लिए यह चुनाव सबसे कठिन है। कभी उत्तर प्रदेश की सत्ता पर राज करने वाली पार्टी के पास आज विधानसभा में कोई विधायक नहीं है और राज्यसभा की एक सीट भी हाथ से जाने वाली है। यह सिर्फ एक सीट का जाना नहीं है, बल्कि एक विचारधारा का संसद के उच्च सदन से गायब होना है। जब बसपा का कोई सांसद राज्यसभा में नहीं होगा तो दलित राजनीति की आवाज कौन उठाएगा, यह सवाल दलित समाज के लिए भी बड़ा है।

समाजवादी पार्टी के सामने दोहरा संकट है। उसके पास संख्या तो है, लेकिन एकजुटता की चुनौती भी है। उसके पास करीब 101 विधायक हैं और कांग्रेस के समर्थन के साथ वह दो सीटें जीतने की स्थिति में है। लेकिन क्या अखिलेश यादव अपने सभी विधायकों को एकजुट रख पाएंगे? पिछली बार भी क्रॉस वोटिंग ने समाजवादी पार्टी को नुकसान पहुंचाया था। इस बार भी भाजपा की नजर समाजवादी पार्टी के नाराज विधायकों पर है।

भाजपा क्यों चाहती है आठवीं सीट? भाजपा को आठवीं सीट इसलिए चाहिए क्योंकि वह राज्यसभा में अपने प्रभाव को और मजबूत करना चाहती है। केंद्र में कई ऐसे कानून हैं, जिन पर राज्यसभा में समर्थन महत्वपूर्ण होता है। उत्तर प्रदेश से आठ सांसद आने पर भाजपा का संख्यात्मक आधार और मजबूत होगा। दूसरा कारण यह है कि भाजपा यह संदेश देना चाहती है कि उत्तर प्रदेश में उसे चुनौती देना आसान नहीं है। सात सीट जीतना सामान्य बात होगी, आठ सीट जीतना असाधारण संदेश होगा। विधायकों की मंडी या लोकतंत्र की मजबूरी। राज्यसभा चुनाव में सबसे कड़वा सच यह है कि यहां विधायकों की खरीद-फरोख्त के आरोप लगते हैं और विचारों के बजाय वोट की कीमत की चर्चा होने लगती है। उत्तर प्रदेश में हर बार राज्यसभा चुनाव से पहले विधायकों की बाड़ेबंदी की खबरें आती हैं। होटलों में रोका जाता है और फोन छीन लिए जाने तक के आरोप लगते हैं। यह लोकतंत्र के लिए चिंता की बात है। जब एक वोट की कीमत 37 विधायक होती है तो हर विधायक खुद को राजा समझने लगता है।

क्लीन स्वीप का मनोविज्ञान भी महत्वपूर्ण है। भाजपा अगर आठ सीट जीत जाती है तो इसका असर सिर्फ दिल्ली में नहीं, बल्कि हर जिले में होगा। कार्यकर्ताओं में यह भाव आएगा कि उनकी पार्टी अभी भी मजबूत है और विपक्ष में निराशा फैलेगी। क्लीन स्वीप का मनोविज्ञान ही ऐसा होता है कि जीत जीत को खींचती है और हार हार को बुलाती है। इसलिए भाजपा इस चुनाव को विधानसभा चुनाव का सेमीफाइनल मानकर लड़ रही है। क्या यह लोकतंत्र के लिए ठीक है? एक ही पार्टी का राज्यसभा में इतना बड़ा दबदबा लोकतंत्र के लिए ठीक नहीं है। उच्च सदन का काम ही है कि वह सरकार को रोक सके, टोक सके। अगर सभी सांसद एक ही पार्टी के होंगे तो फिर उच्च सदन का महत्व ही कम हो जाएगा। विपक्ष का होना जरूरी है, भले ही वह कमजोर ही क्यों न हो। बसपा का बाहर होना और समाजवादी पार्टी का सिमटना उत्तर प्रदेश की विविधता के लिए अच्छा संकेत नहीं है।

क्लीन स्वीप का मनोविज्ञान भी महत्वपूर्ण है। भाजपा अगर आठ सीट जीत जाती है तो इसका असर सिर्फ दिल्ली में नहीं, बल्कि हर जिले में होगा। कार्यकर्ताओं में यह भाव आएगा कि उनकी पार्टी अभी भी मजबूत है और विपक्ष में निराशा फैलेगी। क्लीन स्वीप का मनोविज्ञान ही ऐसा होता है कि जीत जीत को खींचती है और हार हार को बुलाती है। इसलिए भाजपा इस चुनाव को विधानसभा चुनाव का सेमीफाइनल मानकर लड़ रही है।

क्या यह लोकतंत्र के लिए ठीक है? एक ही पार्टी का राज्यसभा में इतना बड़ा दबदबा लोकतंत्र के लिए ठीक नहीं है। उच्च सदन का काम ही है कि वह सरकार को रोक सके, टोक सके। अगर सभी सांसद एक ही पार्टी के होंगे तो फिर उच्च सदन का महत्व ही कम हो जाएगा। विपक्ष का होना जरूरी है, भले ही वह कमजोर ही क्यों न हो। बसपा का बाहर होना और समाजवादी पार्टी का सिमटना उत्तर प्रदेश की विविधता के लिए अच्छा संकेत नहीं है।

राज्यसभा चुनाव को पैसे और प्रभाव से मुक्त करना होगा। इसके लिए मतदान प्रक्रिया में पारदर्शिता बढ़ाने और क्रॉस वोटिंग पर कड़े नियम लागू करने की जरूरत है। साथ ही जनता को भी यह समझना होगा कि राज्यसभा का चुनाव किस तरह होता है और उनका चुना हुआ विधायक किसे वोट दे रहा है। पारदर्शिता ही इस गंदगी को साफ कर सकती है।

भाजपा सात सीट जीतेगी या आठ, सवाल यह है कि क्या उत्तर प्रदेश की राजनीति अब एक ही रंग में रंग जाएगी? क्या विपक्ष के पास इतनी ताकत बचेगी कि वह आने वाले विधानसभा चुनाव में चुनौती दे सके? राज्यसभा का यह चुनाव विधानसभा चुनाव का ट्रेलर है और ट्रेलर में ही अगर एक ही हीरो दिखेगा तो पूरी फिल्म का मजा कैसे आएगा? लोकतंत्र में जीत जरूरी है, लेकिन जीत के साथ विपक्ष का जिंदा रहना भी उतना ही जरूरी है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

अकेले बुजुर्ग दंपति कितने सुरक्षित

भोपाल में एक नई चिंता अब घर-घर में दस्तक दे रही है और वह चिंता है अकेले रहने वाले बुजुर्गों की सुरक्षा की। पहले शहर में संयुक्त परिवार होते थे। घर में दादा-दादी, चाचा-चाची सब साथ रहते थे, लेकिन अब तस्वीर बदल गई है। बच्चे नौकरी के लिए बाहर चले गए हैं। कोई बेंगलुरु में है तो कोई अमेरिका में और पीछे रह गए हैं बूढ़े माता-पिता, अकेले अपने उसी मकान में, जहां कभी किलकारियां गूंजती थीं। अब वहां सन्नाटा रहता है।

भोपाल में अकेले रहने वाले बुजुर्गों और बुजुर्ग दंपतियों की सुरक्षा का सबसे बड़ा सवाल उनके घर के अंदर से जुड़ा है। परिवार के सदस्य नौकरी, कारोबार और पढ़ाई के कारण दूसरे शहरों में रहते हैं। ऐसे में बुजुर्ग घर के कामकाज और देखभाल के लिए केयरटेकर, घरेलू नौकर या बाई रखते हैं और धीरे-धीरे घर की चाबी किसी और को सौंप देते हैं। यही चाबी कभी-कभी खतरा बन जाती है।

पुलिस के आंकड़े बताते हैं कि वेरिफिकेशन की रफ्तार कितनी धीमी है। कोलार थाने में दो महीने में 450 वेरिफिकेशन लंबित हैं। अशोका गार्डन थाना छात्र बहुल क्षेत्र है, लेकिन यहां केवल 115 आवेदन आए हैं। गोविंदपुरा में दो महीने में 200 वेरिफिकेशन हुए हैं। बागसेवनिया में छह महीने में 400 और पूरे साल में 1,000 आवेदन मिले हैं। हबीबगंज में छह महीने में 500 से ज्यादा आवेदन आए हैं। ये आंकड़े बताते हैं कि लोग अभी भी जागरूक नहीं हैं। किरायेदारों, घरेलू नौकरों और कर्मचारियों के सत्यापन की ऑनलाइन व्यवस्था होने के बावजूद पुलिस सभी का वेरिफिकेशन नहीं करवा पाती है। पुलिस अधिकारियों का कहना है कि हॉस्टल और लॉज संचालक किरायेदारों की जानकारी देते ही नहीं हैं।

वेरिफिकेशन इसलिए जरूरी है क्योंकि घर में काम करने वाला नौकर दिनभर आपके घर में रहता है। वह आपके बच्चों के बारे में जानता है, आपकी अलमारी कहां है, यह भी जानता है और उसका कोई रिकॉर्ड पुलिस के पास नहीं है तो यह कितना बड़ा खतरा हो सकता है, इसे समझना जरूरी है। भोपाल में पिछले कुछ वर्षों में बुजुर्गों के साथ हुई लूट या हत्या की घटनाओं में ज्यादातर मामलों में घर के ही नौकर या किरायेदार का हाथ होने की बात सामने आई है। इसलिए पुलिस बार-बार कहती है कि वेरिफिकेशन करवाएं, लेकिन लोग इसे टाल देते हैं।

पुलिस के आंकड़े बताते हैं कि वेरिफिकेशन की रफ्तार कितनी धीमी है। कोलार थाने में दो महीने में 450 वेरिफिकेशन लंबित हैं। अशोका गार्डन थाना छात्र बहुल क्षेत्र है, लेकिन यहां केवल 115 आवेदन आए हैं। गोविंदपुरा में दो महीने में 200 वेरिफिकेशन हुए हैं। बागसेवनिया में छह महीने में 400 और पूरे साल में 1,000 आवेदन मिले हैं। हबीबगंज में छह महीने में 500 से ज्यादा आवेदन आए हैं। ये आंकड़े बताते हैं कि लोग अभी भी जागरूक नहीं हैं। किरायेदारों, घरेलू नौकरों और कर्मचारियों के सत्यापन की ऑनलाइन व्यवस्था होने के बावजूद पुलिस सभी का वेरिफिकेशन नहीं करवा पाती है। पुलिस अधिकारियों का कहना है कि हॉस्टल और लॉज संचालक किरायेदारों की जानकारी देते ही नहीं हैं।

अकेले बुजुर्ग दंपति की समस्या सिर्फ सुरक्षा की नहीं है, बल्कि अकेलेपन की भी है। दिनभर घर में कोई बात करने वाला नहीं होता। टीवी ही उनका साथी होता है। बच्चे फोन पर कभी-कभी बात कर लेते हैं, लेकिन वह बातचीत दिल का बोझ कम नहीं करती। कई बार बुजुर्ग बीमार पड़ जाते हैं और घर में कोई देखने वाला नहीं होता। पड़ोसी भी अब पहले जैसे नहीं रहे। हर कोई अपने घर में बंद है। ऐसे में अकेले बुजुर्ग दंपति का जीवन बहुत कठिन हो जाता है।

इस समस्या का समाधान सिर्फ पुलिस नहीं कर सकती। समाज को भी आगे आना होगा। हर मोहल्ले में एक बुजुर्ग सुरक्षा समिति बननी चाहिए, जो रोज शाम को अकेले रहने वाले बुजुर्गों का हालचाल पूछे। पुलिस को चाहिए कि वह वेरिफिकेशन को आसान बनाए। ऑनलाइन सिस्टम को और सरल किया जाए और थानों में एक अलग डेस्क हो, जो सिर्फ बुजुर्गों के लिए काम करे।

भोपाल झीलों का शहर है, एक सुकून का शहर है, लेकिन अगर यहां के बुजुर्ग ही सुरक्षित नहीं रहेंगे तो इस सुकून का क्या मतलब है? अकेले बुजुर्ग दंपति हमारे ही माता-पिता हैं। उनका सम्मान और उनकी सुरक्षा हमारी पहली जिम्मेदारी है। अगर आज हमने उनकी सुध नहीं ली तो कल जब हम बुजुर्ग होंगे तो हमारे साथ भी यही होगा।

यह समय है कि हम अपनी सोच बदलें। हम अपने घर के नौकर, किरायेदार और केयरटेकर का वेरिफिकेशन करवाएं। हम अपने मोहल्ले के अकेले बुजुर्गों का ध्यान रखें। हम पुलिस को सहयोग करें और अपने माता-पिता को अकेला न छोड़ें। भोपाल में अकेले बुजुर्ग दंपति की सुरक्षा का सवाल सिर्फ कानून-व्यवस्था का सवाल नहीं है। यह हमारे संस्कारों का सवाल है। यह हमारे भविष्य का सवाल है। अगर हमने अभी ध्यान नहीं दिया तो वह दिन दूर नहीं, जब भोपाल में हर घर में एक अकेला बुजुर्ग होगा और उसके पास सिर्फ एक सवाल होगा, मेरा अपना कौन है?

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

तमिलनाडु सरकार के चार यू टर्न, सत्ता का आत्ममंथन

तमिलनाडु सरकार ने पिछले चार महीनों में चार बड़े फैसलों पर यू टर्न लिया है। यह सामान्य घटना नहीं है, बल्कि यह बताती है कि नई विजय सरकार के सामने सत्ता चलाना कितना कठिन है। एक तरफ उसे अपनी अलग पहचान बनानी है, दूसरी तरफ उसे सहयोगी दलों, मछुआरों, छात्रों और प्रेस को भी साथ लेकर चलना है। इन चार यू टर्न में सत्ता का यही अंतर्विरोध दिखाई देता है। पूर्व में हिरासत और गुंडा एक्ट के मामले के बाद विजय सरकार के सत्ता में आते ही राज्य सलाहकार बोर्ड की सिफारिश पर सवुक्कू शंकर की तत्काल रिहाई का सरकारी आदेश जारी किया गया था। पिछली सरकार पर आरोप था कि उसने आलोचनात्मक पत्रकारिता को दबाने के लिए कड़े कानूनों का उपयोग किया था। सवुक्कू शंकर लगातार सरकार की आलोचना करते थे, इसलिए उन्हें जेल में डाला गया था। नई सरकार ने आते ही उन्हें रिहा करके यह संदेश दिया कि वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में है। यह पहला बड़ा यू टर्न था, जिसने पिछली सरकार के फैसले को पलट दिया।

कॉलेजों में छात्रों के राजनीतिक प्रदर्शनों पर रोक लगाने का आदेश जारी हुआ था। सरकार का तर्क था कि शिक्षा संस्थानों को राजनीति से दूर रखा जाए, लेकिन इस आदेश ने पूरे राज्य में विरोध खड़ा कर दिया। छात्र संगठनों और वाम दलों ने कड़ा विरोध किया। छात्रों ने कहा कि कॉलेज ही वह जगह है, जहां लोकतंत्र सीखा जाता है। अगर वहीं बोलने पर रोक लगेगी तो तानाशाही आएगी। भारी दबाव के बाद सरकार ने तुरंत इस आदेश को वापस ले लिया। यह दूसरा यू टर्न था, जिसने दिखाया कि युवा शक्ति के दबाव में सरकार को अपना फैसला बदलना पड़ा।

विधानसभा में परिसीमन और जोनल काउंसिल में सीटों के अनुपात को लेकर मंत्रियों के बयानों और रुख पर स्पष्टीकरण देने का घटनाक्रम भी राजनीतिक यू टर्न के रूप में सामने आया। दरअसल, केंद्र सरकार द्वारा प्रस्तावित परिसीमन को लेकर दक्षिण के राज्यों में यह आशंका है कि उनकी सीटें कम हो जाएंगी। तमिलनाडु सरकार के कुछ मंत्रियों ने इस पर कड़े बयान दिए थे, लेकिन बाद में जब सहयोगी दलों और कानूनी सलाहकारों ने बताया कि इस तरह के बयान से केंद्र से टकराव बढ़ सकता है तो सरकार को अपने ही मंत्रियों के बयानों पर स्पष्टीकरण देना पड़ा। यह एक तरह का राजनीतिक यू टर्न था, जहां सरकार ने आक्रामक रुख से पीछे हटकर संतुलित रुख अपनाया। पट्टिनापक्कम में एक हजार दो सौ करोड़ रुपये की लागत से नए सचिवालय परिसर के निर्माण का सरकारी आदेश आया था। सरकार चाहती थी कि समुद्र किनारे एक आधुनिक सचिवालय बने, लेकिन मछुआरों और सहयोगी दलों के भारी विरोध के बाद सरकार ने ही इस पर समीक्षा और रोक की बात कही। मछुआरों का कहना था कि इस निर्माण से उनका रोजगार प्रभावित होगा और समुद्र के पर्यावरण को नुकसान होगा। सहयोगी दलों ने भी कहा कि इतनी बड़ी राशि सचिवालय पर खर्च करने के बजाय उसे बाढ़ नियंत्रण और शिक्षा पर खर्च किया जाना चाहिए। इस विरोध के बाद सरकार को अपना ड्रीम प्रोजेक्ट रोकना पड़ा। इन चार यू टर्न से चार संदेश सामने आते हैं। तमिलनाडु में प्रेस को दबाया नहीं जा सकता। सवुक्कू शंकर की रिहाई ने यह संदेश दिया। छात्रों को राजनीति से पूरी तरह दूर नहीं किया जा सकता। परिसीमन जैसे संवेदनशील मुद्दे पर बिना सोचे बयान नहीं दिया जा सकता। विकास के नाम पर मछुआरों के हितों की अनदेखी नहीं की जा सकती।

विजय सरकार नई है और उसे फिल्मी लोकप्रियता से राजनीतिक परिपक्वता तक का सफर तय करना है। चार यू टर्न से एक बात साफ है कि सरकार के सामने अभी नीति और निर्णयों में स्थिरता की चुनौती है। वह फैसले लेती है और फिर विरोध होने पर पीछे हटती है। यह शैली लंबे समय तक नहीं चल सकती। सरकार को चाहिए कि कोई भी आदेश जारी करने से पहले सभी हितधारकों से बात करे।

कई लोग यू टर्न को कमजोरी मानते हैं, लेकिन लोकतंत्र में फैसला बदलना हमेशा कमजोरी नहीं होता। जो सरकार अपनी गलती मानकर फैसला वापस लेती है, वह जनता की आवाज सुनने का संकेत देती है। तानाशाह सरकारें कभी पीछे नहीं हटतीं। तमिलनाडु के इन चार यू टर्न ने यह दिखाया कि वहां जनता की आवाज का महत्व है। तमिलनाडु सरकार के चार बड़े फैसलों पर यू टर्न लेना केवल खबर नहीं है, बल्कि यह एक राजनीतिक पाठ है। यह पाठ बताता है कि सत्ता में आते ही बड़े-बड़े वादे करना आसान है, लेकिन उन्हें जमीन पर उतारना कठिन है। सवुक्कू शंकर की रिहाई से लेकर पट्टिनापक्कम सचिवालय तक हर यू टर्न के पीछे जनता का दबाव है और यही लोकतंत्र की ताकत है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)